SHIKSHA SAMVAD
International Journal of Multidisciplinary Research
ISSN: 2584-0983 (Online)
© Shiksha Samvad|Volume-03| Issue-04| June- 2026
Available online at: https://shikshasamvad.com/
DOI:- https://doi.org/10.64880/shikshasamvad.v3i4.44

संस्थानगत नियोजन: आवश्यकता, आयाम और प्रारुप

डॉ. करतार सिंह

प्रोफेसर, शिक्षक प्रशिक्षण एवं निरौपचारिक शिक्षा विभाग (आई.ए.एस.ई.),जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नई दिल्ली

सारांश

संस्थागत योजना वह व्यवस्थित प्रक्रिया है जिसके माध्यम से किसी शैक्षिक संस्था के उपलब्ध संसाधनों का प्रभावी आवंटन एवं उपयोग करते हुए उसके लक्ष्यों और उद्देश्यों को प्राप्त किया जाता है। इसमें संस्था की आवश्यकताओं के अनुरूप नीतियों, रणनीतियों और कार्य-योजनाओं का निर्माण किया जाता है, जिससे शिक्षण–अधिगम की गुणवत्ता, प्रशासनिक दक्षता तथा छात्र विकास सुनिश्चित किया जा सके। संस्थागत योजना के अंतर्गत भौतिक संसाधन, मानव संसाधन, वित्तीय प्रबंधन, पाठ्यक्रम विकास, सह-पाठ्यक्रम गतिविधियाँ तथा मूल्यांकन प्रक्रियाएँ सम्मिलित होती हैं। यह योजना प्रधानाचार्य, शिक्षकों, प्रशासकों और अन्य हितधारकों के सामूहिक प्रयास से तैयार की जाती है, ताकि संस्था सुचारु, न्यायसंगत और प्रभावी ढंग से कार्य कर सके। संस्थागत योजना न केवल संस्था के समग्र विकास को बढ़ावा देती है, बल्कि इसे समाज और राष्ट्र की बदलती आवश्यकताओं के अनुरूप भी बनाती है, जिससे सतत शैक्षिक विकास संभव हो पाता है। जे.पी. नाइक ने कहा है कि संस्थागत योजना शैक्षिक योजना का एक हिस्सा है। यह एक विशिष्ट संस्था तक सीमित होती है और उस संस्था के लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए कार्य करती है। यह जमीनी स्तर की योजना का एक हिस्सा है। यह संस्था के पास मौजूद या प्राप्त किए जा सकने वाले संसाधनों के बेहतर और अधिक फलदायी उपयोग को सुनिश्चित करती है। संस्था ही अपनी आवश्यकताओं और हल किए जाने वाले समस्याओं को सबसे अच्छी तरह जानती है। इसलिए, संस्थागत योजना ही संस्था के कल्याण और विकास के लिए सर्वोत्तम योजना बना सकती है। (दत्ता, 2024)I

मुख्य शब्द: शिक्षा, संस्थागत योजना, शैक्षिक संस्था, संसाधन, शैक्षिक विकास I

प्रस्तावना

वर्तमान समय में, शैक्षिक संस्थाओं का सुधार और उनका नियमित विकास आधुनिक भारत के लिए आवश्यक पहलू है। शैक्षिक संस्थाओं की गुणवत्ता विद्यार्थियों को अध्ययन के लिए आकर्षित करती है। निरन्तर सुधार और विकास संस्थानों की दर संबंधित विश्वविद्यालयों की श्रेणी को धनात्मक रूप से प्रभावित करती है। बदले हुए समाज के स्वरूप में और आधुनिकीकरण की दौड़ में शिक्षा के उद्देश्यों में निरन्तर परिवर्तन हो रहे हैं। जिनमें प्रमुख हैं : नवाचारी विधिओं से शिक्षा प्रदान करना, वैश्विक स्तर की पाठ्यचर्या लागू करना , अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की आवश्यकताओं के अनुरूप विद्यार्थियों को योग्य बनाना। उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए संस्थानों में भौतिक, मानवीय, तथा समुदाय संबंधी संसाधन उपलब्ध होते हैं। इन संसाधनों का उपयोग करते हुए एक संस्थान अपने पूर्व निर्धारित उद्देश्यों को प्रभावशाली रूप से प्राप्त करने के लिए अपनी क्रियाओं की वार्षिक और दीर्घकालीन कार्य नीति बनाता है और उसके अनुसार कार्य करता है। सरल शब्दों में, यह कार्य नीति ही एक संस्थान की योजना कहलाती है। दूसरे शब्दों में इसे संस्थागत

नियोजन कहते हैं जिसके प्रमुख उद्देश्यों उपलब्ध संस्थानों का उचित रूप से उपयोग करते हुए अपने उद्देश्यों को संस्थान के विकास के लिए पूरा करना है। इसका बल उपलब्ध संसाधनों के कुशल उपयोग पर होता है तथा अतिरिक्त संसाधनों की पहचान उसकी प्राप्ति के लिए और उसके प्रयोग के लिए योजना बनाना है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने भी संस्थागत नियोजन के द्वारा शैक्षिक संस्थाओं के विकास पर जोर दिया है।

प्रस्तुत लेख "संस्थागत नियोजन : आवश्यकता, आयाम और प्रारूप" इस क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण प्रयास है। संस्थागत नियोजन का अर्थ और इसकी आवश्यकता का उल्लेख करते हुए इसके महत्व, विशेषताओं, प्रमुख सोपानों और आयामों पर विस्तार से चर्चा की गई है। इसका अध्ययन करने के उपरांत शैक्षिक संस्थाओं में संस्थागत नियोजन की प्रक्रिया को अपनाना और इसको लागू करने योग्य बनाना है।

संस्थागत योजना से अभिप्राय

संस्थागत योजना शैक्षिक नियोजन का एक अंग है। संस्था के लिए तैयार करने वाली योजना को संस्थागत योजना कहा जाता है। यह किसी विद्यालय, उच्च शिक्षण संस्था के द्वारा उस संस्थान के लक्ष्यों (जो पूर्व निर्धारित होते हैं) को प्राप्त करने के लिए बनाई जाती है। यह योजना संस्था में हुए मात्रात्मक व गुणात्मक सुधारों को सभी कार्यक्रमों का आधार बनाती है। सरल शब्दों में कहा जा सकता है कि, संस्थागत योजना किसी संस्थान में शैक्षिक विकास व गुणात्मक सुधार के पूर्व निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने वाली योजना है जो एक संस्थान अपने लिए स्वयं बनाता है।

एम.बी. बुच के अनुसार, "एक शैक्षिक संस्था द्वारा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भविष्य में प्राप्त होने वाले साधनों के आधार पर सुधार व विकास के दृष्टिकोण से बनाई गई योजना, किसी संस्थान की संस्थागत योजना कहलाती है"I

जे.पी. नायक के अनुसार, "संस्थागत योजना चार समस्याओं का समूह समाधान है, शिक्षकों को स्वतंत्रता देना, शिक्षण को प्रभावी बनाना, योजना निर्माण व कार्यान्वियन में शिक्षकों को शामिल करना, व संसाधनों का प्रबंधन कर प्रभावी व उच्चतम परिणाम प्राप्त करना।" जे.पी. नायक के अनुसार संस्थागत नियोजन के चार समस्याओं का एक अनूठा समाधान है, (दत्ता, 2024)I आकृति 1: संस्थागत नियोजन द्वारा चार समस्याओं का समाधान

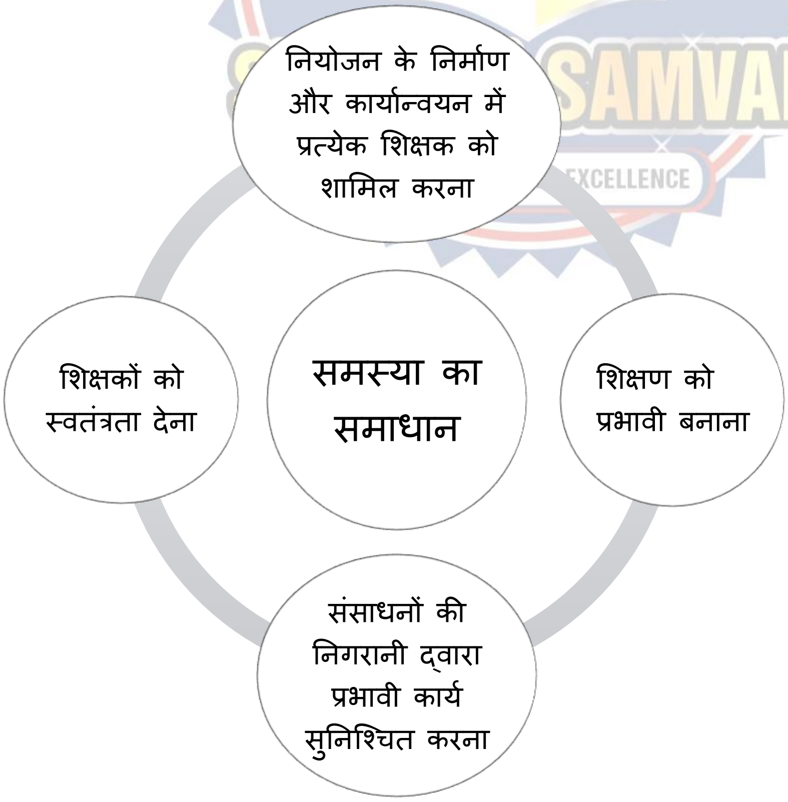

इन परिभाषाओं के आधार पर कह सकते हैं कि किसी संस्थान के लोगों द्वारा इस संस्थान के विकास व संस्थागत सुधारो के औचित्य से बनाई गई योजना जो संस्था के लक्ष्य को उसके सेमी संसाधनों से प्राप्त कर सके उसे ही संस्थागत योजना कहते हैं। ऐसी योजना से किसी भी संस्थान की भावी दिशा व उसकी विशेषताओं का अनुमान लगाया जा सकता है।

संस्थागत नियोजन की विशेषताएँ

किसी भी संस्था की व्यवस्थित, प्रभावशाली और लक्ष्य-उन्मुख कार्यप्रणाली के लिए संस्थागत योजना की विशेषताएँ महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इन विशेषताओं के माध्यम से कोई भी संस्थान अपने उद्देश्यों को निर्धारित कर सकता है तथा उन्हें प्राप्त कर सकता है, जिससे उसकी कार्यक्षमता और गुणवत्ता में सुधार होता है। संस्थागत नियोजन की प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख निम्नलिखित हैं :-

(i) सूक्ष्म स्तर की योजना : यह योजना शैक्षिक नियोजन के सूक्ष्म स्तर पर बनाई जाने वाली योजना है। अर्थात किसी संस्था या उसके हिस्से के लिए बनाई जाने वाली योजना सूक्ष्म स्तर योजना कहलाती है। इस योजना का उद्देश्य स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति, स्थानीय समस्याओं का समाधान और उपलब्ध संसाधनों का कुशल व ध्यानपूर्ण उपयोग होता है। स्थानीय आवश्यकताओं के ध्यानपूर्ण अध्ययन के कारण यह योजना सबसे व्यावहारिक और प्रभावी मानी जाती है। यह योजना संस्था का जमीनी स्तर पर विकास सुनिश्चित करती है और संस्था से जुड़े लोगों की वास्तविक जरूरतों को पूरा करती है। इस योजना की प्रकृति लचीली होती है, जिसे आवश्यकतानुसार बदला जा सकता है। यही यह योजना त्वरित परिणाम एवं उपलब्धि हासिल करने में सहायक होती है क्योंकि इसका दायरा सीमित होता है।

(ii) उद्देश्यपूर्ण योजना : जो योजना पूर्व-निर्धारित लक्ष्यों को ध्यान में रखकर बनाई जाती है, उसे उद्देश्यपूर्ण योजना कहा जाता है। इस योजना के निर्माण के लिए सबसे पहले संस्था के उद्देश्यों को निर्धारित किया जाता है, इसके उपरांत इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए उपयुक्त रणनीतियां, संसाधन और कार्ययोजनाएं निर्धारित की जाती हैं। इसके अलावा यह योजना संस्थाओं को दिशा-निर्देश प्रदान करने में समन्वय और एकरूपता बनाए रखती है। संस्था के परिणामों का मूल्यांकन इस योजना द्वारा किया जाता सकता है क्योंकि निर्धारित उद्देश्यों के आधार पर परिणाम की तुलना की जा सकती है। इस प्रकार उद्देश्य पूर्ण योजना संस्था की उत्पादकता और सफलता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

(iii) क्रमबद्ध योजना : यह योजना कार्यों को सरल व निश्चित क्रम में व्यवस्थित करने का कार्य करती है। ऐसा करने से संस्थागत कार्यों को प्राथमिकताओं के अनुसार समय पर और सही तरीके से पूरा किया जा सकता है। इस योजना में संस्थागत गतिविधियों को क्रम में रखा जाता है और एक चरण पूरा होने के बाद दूसरे चरण की तरफ बढ़ा जाता है। क्रमबद्ध योजना कार्यों को सरल व व्यवस्थित बनाती है और समय प्रबंधन में सहायक होती है, क्योंकि प्रत्येक चरण के लिए एक निर्धारित समय सुनिश्चित किया जाता है। अगर इस योजना को क्रमबद्ध तरीके से न किया जाय तो कार्यों में अव्यवस्था उत्पन्न हो जाती है

(iv) समयबद्ध योजना : इस योजना का उद्देश्य सभी कार्यों को निर्धारित समय-सीमा में पूर्ण करना होता है। योजना के सभी चरणों जैसे आरंभ, क्रियान्वयन और मूल्यांकन के लिए प्रारंभ में ही समय निर्धारित कर दिया जाता है। जिससे संस्थागत कार्य व्यवस्थित रूप से पूरे किया जा सकते हैं। उदाहरण के लिए शैक्षिक संस्था में पाठ्यक्रम को समय पर पूर्ण करना, परीक्षाओं को निर्धारित समय अवधि पर ही आयोजित करना व परिणाम की घोषणा का निर्धारित समयबद्ध योजना में पूर्ण होना इसका भाग है।

(v) उपलब्ध संसाधनों के अनुकूलतम उपयोग पर आधारित योजना : इस योजना के तहत शैक्षिक संस्थानों को भौतिक, मानवीय और वित्तीय संसाधनों का सर्वोत्तम व अनुकूलतम उपयोग सुनिश्चित किया जाता है। इस योजना द्वारा सीमित संसाधनों से संस्था के लक्ष्यों की पूर्ति कुशलता पूर्वक की जाती है। इस प्रकार की योजना का उपयोग करके संस्था की लागत को कम किया जाता है और कार्य क्षमता को बढ़ाया जाता है। क्योंकि संसाधनों का प्रयोग अत्यधिक सूझबूझ के साथ और अनुकूलता से किया जाता है। यह योजना समग्र विकास पर संस्था की सफलता को प्रारूप देती है।

(vi) अतिरिक्त संसाधनों की न्यूनतम मांग पर आधारित योजना : यह बजट की कमी और लागत को कम करने के उद्देश्य से बनाए जाने वाली योजना है। इसके अंतर्गत उपलब्ध संसाधनों को ही अधिकतम परिणाम प्राप्त करने के रूप में उपयोग में लाया जाता है और अतिरिक्त संसाधनों की न्यूनतम आवश्यकता रखी जाती है। यह योजना व्यवहारिकता पर आधारित है जिससे इसे लागू करना आसान होता है। यह योजना संस्थाओं को आत्मनिर्भर बनाने में सहायक होती है और संसाधनों के विवेकपूर्ण योग की भावना विकसित करती है। यह योजना सीमित उपलब्ध संसाधनों से अधिकतम परिणाम उपलब्ध कराती है और अन्य संसाधनों की मांग को नियमित करती है।

(vii) संस्थान के सभी मानवीय संसाधनों के प्रतिनिधित्व पर आधारित योजना : इस योजना में संस्था के मानव संसाधनों जैसे शिक्षक कर्मचारियों, उच्च पदाधिकारियों का उपयोग कर उनके प्रतिनिधित्व से निर्णय लेकर सभी की भागीदारी सुनिश्चित करके संस्था का क्रियान्वयन किया जाता है। इस योजना का केंद्र मानव सहभागिता प्रतिनिधित्व व लोकतांत्रिक निर्णय प्रणाली है।

(viii) कार्य के प्रति लचीली योजना : इस योजना की मुख्य विशेषता बदलती परिस्थितियों जैसे नई नीतियां, तकनीकी परिवर्तन या भावी समस्याओं के अनुसार संशोधित होना है। यह योजना समय, परिस्थिति संसाधन और आवश्यकताओं के अनुसार बदली जा सकती है। लचीली योजना कार्य के प्रति आने वाली समस्याओं को संभालने में सहायक होती है और कार्यों को बाधित होने से बचाती है।

(ix) संस्थान के सुधार व विकास पर आधारित योजना : इस योजना का उद्देश्य संस्था की वर्तमान स्थिति में सुधार करना और उसका समग्र विकास करना है। संस्थाओं की कमजोरी समस्याओं और आवश्यकताओं की पहचान करके उन्हें जब दूर करने के लिए योजना बनाई जाती है, उसे ही संस्थागत सुधार की योजना कहा जाता है। इसके अलावा यह योजना निरंतर मूल्यांकन पर आधारित है और मूल्यांकन के आधार पर सुधार किए जाते हैं जिससे संस्था अपनी कार्य प्रणाली को बेहतर कर विकास की ओर अग्रसर होती है। यह योजना संस्था को अधिक सक्षम आधुनिक और गुणवत्तापूर्ण बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

(x) आंकलन पर आधारित योजना : जब संस्था की वर्तमान स्थिति, उपलब्धि, कमी, व भावी विकास की संभावनाओं का वास्तविक मूल्यांकन करके संस्था के लिए योजना बनाई जाती है उसे आंकलन आधारित योजना कहा जाता है। यह योजना तथ्य आधारित होती है, क्योंकि यह वास्तविक आंकड़ों और निरीक्षण का उपयोग करके बनाई जाती है। यह योजना निरंतर सुधार को बढ़ावा देती है और संस्था के विभिन्न पहलुओं के समय-समय पर होने वाले मूल्यांकन को बल देती है। इस योजना से संस्था का संतुलित व प्रभावी विकास सुनिश्चित किया जा सकता है।

संस्थागत नियोजन की आवश्यकता

प्रत्येक संस्था का अपना एक कार्यक्षेत्र होता है। और इस कार्य क्षेत्र में उसके द्वारा किए गए प्रयास ही उस संस्थान की प्रतिष्ठा को निर्धारित करते हैं। एक संस्था मुख्य रूप से सत्र के आरंभ में अपने पूर्वागत प्राप्त अनुभवों से प्रेरित होकर नए सत्र को आरंभ करती है। इस स्तर पर संस्था के समक्ष महत्वपूर्ण बिंदु होते हैं जो विचारणीय हैं जैसे:

(i) उपलब्ध संसाधनों का कुशल उपयोग किस प्रकार से किया जाए?

(ii) पाठ्यचर्या संबंधित क्षेत्र में कौन-कौन से आवश्यक सुधार किए जाएं जिससे यह नवाचार सृजनात्मक तकनीकी और राष्ट्रीय स्तर की अपेक्षाओं को पूरा कर सके।

(iii) निर्धारित शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए महत्वपूर्ण क्षेत्र की पहचान करना और उसके लिए नई कार्य नीति सुनिश्चित करना सम्मिलित है।

(iv) उन संसाधनों की आवश्यकताओं की पहचान सुनिश्चित करना जो संस्थान के भावी विकास के लिए आवश्यक समझे गये हैं।

ये महत्वपूर्ण चार बिंदु संस्था के वर्तमान शैक्षिक और भौतिक सुधार के लिए अत्यधिक आवश्यक है सुधार एक तात्कालिक प्रक्रिया है जो शीघ्र ही किए गए महत्वपूर्ण सुधारो से उजागर होती है जबकि विकास एक दीर्घकालीन प्रक्रिया है जो निरंतर किए गए प्रयासों से प्रदर्शित होती है। प्रस्तावित

सुधारों की प्राप्ति के लिए संस्थाओं को अपनी संस्थागत योजना का विकास करना आवश्यक है जो संस्था की भविष्य की महात्वाकांक्षाओं (विजन) को प्राप्त करने में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

संस्थागत योजना के विकास करने के प्रमुख सोपान

संस्थागत योजना एक व्यवस्थित व क्रमबद्ध प्रक्रिया है, जिसमें विभिन्न चरण होते हैं। यह चरण आपस में एक दूसरे से जुड़े होते हैं और एक क्रम में चलते हैं। एक अच्छी संस्थागत योजना का विकास करने के लिए निम्नलिखित प्रमुख सोपान हैं :

(i) परामर्श सभा का आयोजन

यह संस्थागत योजना का प्रारंभिक चरण है। जिसमें संगठन के सलाहकारों, हितधारकों के विचार, सुझाव और अनुभवों को एकत्रित कर संस्था के हित के लिए योजना व उसके उद्देश्य तय किए जाते हैं। इस प्रक्रिया में संस्था के प्रमुख, शिक्षक, कर्मचारी, अभिभावक तथा कभी-कभी विद्यार्थी भी शामिल होते हैं। इस सभा के दौरान संस्थान की वर्तमान स्थिति, आवश्यकताओं, समस्याओं और प्रस्तावित अपेक्षाओं पर खुलकर चर्चा की जाती है यह आयोजन पारदर्शिता और लोकतांत्रिक प्रक्रिया को बढ़ावा देती है और संभावित समस्याओं की पहचान करके समाधान खोजने का प्रयास करती है।

(ii) उद्देश्यों का निर्माण

कोई भी संस्था अपने विशिष्ट लक्षणों को ध्यान में रखते हुए ही कार्य करती है। यह लक्ष्य समयबद्ध यथार्थवादी और मापनीय होते हैं। जो संस्था के विकास को दिखाते हैं लक्ष्य से संस्थान को एक दिशा मिलती है और यह तय किया जा सकता है कि संस्था भविष्य में क्या हासिल करना चाहती है। उद्देश्यों का निर्माण बहुत ही महत्वपूर्ण चरण है जो संस्थागत योजना के लिए उसे संस्था की समस्याओं और उसके समाधानों को ध्यान में रखते हुए बनाए जाते हैं। उद्देश्यों का निर्माण किया जाता है। शिक्षण में गुणवत्ता शिक्षण उद्देश्य का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है।

(iii) उपलब्ध संसाधनों का आंकलन

इस चरण में संस्था के द्वारा उसके उपलब्ध साधनों का विश्लेषण किया जाता है और देखा जाता है कि संस्था के पास कौन-2 से साधन उपलब्ध हैं और वह संस्था के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए पर्याप्त हैं या नहीं अर्थात उनकी स्थिति क्या है। इन संसाधनों में मानव, वित्तीय और भौतिक सभी संसाधन सम्मिलित होते हैं। संसाधनों की सीमितता के कारण उनके कुशल प्रयोग पर भी बल दिया जाता है जिससे संस्थागत गुणवत्ता को बढ़ाया जा सके। संसाधन की कमी होने पर अतिरिक्त संसाधन का नियोजन व संसाधनों की प्राथमिकता को भी इसी चरण में सुनिश्चित किया जाता है।

(iv) कार्यों के प्रति प्राथमिकताओं का निर्धारण

संस्थागत योजना में कार्यों के प्रति प्राथमिकता का निर्धारण करना एक महत्वपूर्ण तत्व है जिसके अंतर्गत विभिन्न कार्यों को उनकी महत्व के अनुसार निश्चित क्रम में रखा जाता है ताकि योजना का क्रियान्वयन व्यवस्थित व प्रभावी ढंग से किया जा सके। प्राथमिकता का अर्थ यह तय करना कि कौन सा कार्य अधिक महत्वपूर्ण और तात्कालिक हैं और जिन्हें पहले पूरा किया जाना चाहिए। अधिक महत्वपूर्ण कार्य पहले और कम महत्वपूर्ण कार्य बाद में किए जाने चाहिए। जिससे कि समय और संसाधनों दोनों का इस्तेमाल तार्किक व यथार्थपूर्ण तरीके से किया जा सके।

(v) संस्थागत विकास योजना का निर्माण

यह चरण प्रक्रिया का केन्द्र होता है, यहाँ संस्था अपने उद्देश्यों की प्राप्ति करने के लिए कार्य-योजना तैयार करती है। यह चरण संस्था को एक स्पष्ट रोडमैप प्रदान करता है, जिससे व्यवस्थित रूप में आगे बढ़ा जा सकता है।

इस प्रक्रिया में सबसे पहले पूर्व निर्धारित उद्देश्यों के अनुरूप विभिन्न कार्यों व गतिविधियों की पहचान कर उनका क्रम में लगाकर एक सूची तैयार की जाती है। साथ ही सभी कार्यों की समय सीमा निर्धारित की जाती है। इसके बाद आवश्यक संसाधनों का आबंटन तथा जिम्मेदार व्यक्तियों का निर्धारण

© Shiksha Samvad | Received: 10 June -2026 | Accepted: 15 June - 2026 | Published:20 June - 2026

किया जाता है। समस्याओं के वैकल्पिक उपाय तैयार किए जाते हैं। इस प्रकार संस्थागत विकास योजना, संस्था को कार्य रूपरेखा प्रदान करती है जिससे सभी गतिविधियाँ सुव्यवस्थित ढंग से संचालित की जा सके।

(vi) संस्थागत योजना की समीक्षा

योजना निर्माण के पश्चात योजना समीक्षा का चरण प्रारंभ होता है। जिसमें बनाई गई योजना के क्रियान्वयन और परिणामों का विश्लेषण किया जाता है, ताकि योजना के प्रभावों को समझा जा सके। योजना समीक्षा का मुख्य कार्य केवल योजना में कमियाँ ढूँढना नहीं होता, बल्कि योजना की अच्छी बातों की पहचान करना, उन्हें आगे बढ़ाना तथा क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओं को पहिचानना होता है। साथ ही सुधार क्षेत्रों को पहचानकर उसके लिए उपाय तैयार करना होता है।

योजना समीक्षा, संस्थागत कार्यप्रणाली को और योजना निर्माण को बनाने की प्रक्रिया है। यह अधिक प्रभावी निर्णय लेने और भविष्य की योजनाओं को सुधारने, समीक्षा करने और अधिक सफल बनाने में सहायता करती है।

(vii) योजना का क्रियान्वयन

इस चरण योजना को व्यवहार में लागू किया जाता है जिससे योजना का वास्तविक परीक्षण किया जा सके। इस स्तर में समन्वय, नेतृत्व और निगरानी का विशेष महत्व होता है। अगर इस स्तर में असंगत पैदा होती है तो अच्छी से अच्छी योजना भी असफल हो जाती है, क्योंकि सभी सम्बन्धी पक्षों की सक्रिय सहभागिता और सहयोग इस स्तर में जरूरी समझा जाता है।

(viii) हस्तक्षेप

इस चरण का उद्देश्य क्रियान्वित की गई योजना में जानबूझकर सुधार लाना होता है जिससे क्रियान्वयन में आ रही समस्याओं को दूर किया जा सके और कार्यों को नई दिशा देकर बेहतर परिणाम सुनिश्चित किए जा सके।

योजना प्रबंधन में संलग्न व्यक्ति के द्वारा स्थिति का विश्लेषण करने के पश्चात ही योजना में हस्तक्षेप करने आवश्यक प्रस्तावित बदलाव किए जाते हैं, जैसे : नई रणनीति अपनाना, संसाधनों का पुनर्वितरण करना या कार्यप्रणाली में सुधार करना। इस चरण की विशेषता यह है कि समय पर और उद्देश्यपूर्ण बदलाव कर बड़ी समस्याओं को उत्पन्न होने से पहले ही रोक दिया जाता है। इस प्रकार हस्तक्षेप एक सुधारात्मक कदम होता है।

(ix) शैक्षिक योजना का मूल्यांकन

योजना मूल्यांकन का अर्थ है किसी योजना, कार्य या प्रक्रिया के परिणामों का व्यवस्थित रूप से आंकलन करना, ताकि यह जाना जा सके कि निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति किस हद तक हुई है। मूल्यांकन के दौरान विभिन्न पहलुओं पर ध्यान दिया जाता है जैसे कार्यों की गुणवत्ता, समयबद्धता, संसाधनों का उपयोग और प्राप्त परिणामों का स्तर। मूल्यांकन करने के लिए आँकड़ों व निरीक्षणों का सहारा लिया जाता है।

(x) भावी योजना के लिए फीडबैक प्राप्त करना

यह योजना का अन्तिम चरण है जिसका अर्थ है योजना के बारे में प्रतिक्रिया प्राप्त करना जो यह बता सके कि कार्य कितना प्रभावी रहा और उसमें किन सुधारों की आवश्यकता है। फीडबैक के माध्यम से संस्थागत योजना की वास्तविक स्थिति और परिणामों की जानकारी प्राप्त होती है।

फीडबैक शिक्षक, विद्यार्थी, कर्मचारी, अभिभावक व अन्य सम्बन्धित व्यक्तियों से प्राप्त किया जा सकता है। फीडबैक हमेशा सुधार आधारित होता है जो भावी योजनाओं में सुधार लाने का कार्य करता है। इसके माध्यम से संस्था यह समझ पाती है कि कौन-सी रणनीतियाँ और कार्यनीतियाँ सफल रहीं और किन क्षेत्रों में सुधार की आवश्यकता है। फीडबैक एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है जो योजना को व्यवस्थित, प्रभावी और परिणामोन्मुख बनाने में सहायता करती है।

आधुनिक भारत में शिक्षा के प्रति संस्थागत नियोजन के आयाम

आधुनिक भारत में शिक्षा के प्रति संस्थागत नियोजन के आयाम ऐसे होने चाहिए जो शिक्षा को गुणवत्तापूर्ण, समावेशी, व्यावहारिक और भविष्य उन्मुख बना सकें। संस्थागत नियोजन का मुख्य उद्देश्य शैक्षिक संस्थानों के संसाधनों, नीतियों और प्रक्रियाओं का इस प्रकार नियोजन करना है कि शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया प्रभावी हो तथा विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास सुनिश्चित किया जा सके। इसके अंतर्गत सबसे पहला आयाम शैक्षिक गुणवत्ता का संवर्धन है, जिसके अंतर्गत पाठ्यक्रम का नियमित अद्यतन, शिक्षण विधियों में नवाचार और गतिविधि आधारित शिक्षण को बढ़ावा देना शामिल है। उदाहरण के रूप में, विद्यालयों और महाविद्यालयों में प्रोजेक्ट वर्क, प्रयोगात्मक शिक्षण और कौशल आधारित गतिविधियों को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया जा सकता है, जिससे विद्यार्थियों में तार्किक सोच और व्यावहारिक दक्षता विकसित हो। आधुनिक भारत में शिक्षा के प्रति संस्थागत नियोजन के आयाम इस प्रकार से है:

- (i) बहुविषयक एवं समग्र शिक्षा
- (ii) लचीलापन एवं बहु-प्रवेश-बहु-निकास प्रणाली
- (iii) गुणवत्ता पूर्ण शिक्षक प्रशिक्षण एवं विकास
- (iv) समावेशी शिक्षा एवं समान अवसर
- (v) डिजिटल शिक्षा एवं तकनीकी एकीकरण

- (vi) मातृभाषा / स्थानीय भाषा में शिक्षण
- (vii) मूल्य, नैतिक एवं भारतीय ज्ञान परंपरा
- (viii) अनुसंधान, नवाचार एवं स्टार्टअप संस्कृति
- (ix) मूल्यांकन एवं परीक्षा सुधार
- (x) सुशासन एवं संस्थागत स्वायत्तता

(i) बहुविषयक एवं समग्र शिक्षा

संस्थागत नियोजन में ऐसे पाठ्यक्रम बनाए जाने चाहिए जिनमें कला, विज्ञान, वाणिज्य, व्यावसायिक और तकनीकी विषयों को एक साथ जोड़ा जाए, ताकि छात्र केवल एक ही क्षेत्र तक सीमित न रहें। उदाहरण के लिए, कोई छात्र बी.ए. के साथ कंप्यूटर एप्लीकेशन, बी.कॉम के साथ डेटा एनालिटिक्स या विज्ञान के साथ उद्यमिता पढ़ सकता है, जिससे उसे नौकरी के अधिक अवसर मिलते हैं और आत्मनिर्भर बनने में मदद मिलती है। इससे शिक्षा पर

किया गया खर्च अधिक उपयोगी सिद्ध होता है, क्योंकि बहु-कौशल युक्त छात्र भविष्य में बेहतर आय अर्जित करते हैं और देश की आर्थिक प्रगति में योगदान देते हैं। (NEP 2020, p.11.1- 11.12)

(ii) लचीलापन एवं बहु-प्रवेश-बहु-निकास प्रणाली

शिक्षा केवल एक ही विषय तक सीमित न होकर कई विषयों के संयोजन पर आधारित होनी चाहिए, जिससे छात्र अपनी रुचि और भविष्य की जरूरतों के अनुसार विषय चुन सकें। उदाहरण के लिए, कोई छात्र इतिहास के साथ डेटा साइंस या वाणिज्य के साथ मनोविज्ञान पढ़ सकता है, जिससे उसे रोजगार के अधिक अवसर मिलते हैं और शिक्षा पर किया गया खर्च अधिक उपयोगी सिद्ध होता है। CBCS प्रणाली के अंतर्गत छात्र अपनी पसंद के विषयों में क्रेडिट अर्जित कर सकते हैं, जिससे सीखना अधिक लचीला और रुचिकर बनता है। वहीं, बहु-प्रवेश–बहु-निकास प्रणाली छात्रों को किसी भी कारण से पढ़ाई बीच में छोड़ने पर भी नुकसान से बचाती है, क्योंकि उन्हें एक, दो या तीन वर्ष के बाद क्रमशः प्रमाणपत्र, डिप्लोमा या डिग्री मिल सकती है और वे बाद में फिर से पढ़ाई शुरू कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, यदि कोई छात्र आर्थिक कारणों से दो वर्ष बाद पढ़ाई रोक देता है, तो उसे डिप्लोमा मिल जाएगा और वह नौकरी कर सकता है, जिससे उसकी आय बढ़ेगी और भविष्य में वह पुनः शिक्षा जारी रख सकेगा; इस प्रकार यह व्यवस्था व्यक्ति, समाज और अर्थव्यवस्था तीनों के लिए लाभकारी सिद्ध होती है। (NEP 2020, p. 11.1 – 11.12)

(iii) गुणवत्ता पूर्ण शिक्षक प्रशिक्षण एवं विकास

शिक्षकों के लिए समय-समय पर प्रशिक्षण कार्यक्रम, कार्यशालाएँ और रिफ्रेशर कोर्स आयोजित किए जाने चाहिए, ताकि वे नई शिक्षण विधियों, डिजिटल तकनीक और आधुनिक मूल्यांकन प्रणालियों से परिचित हो सकें। उदाहरण के लिए, यदि शिक्षकों को ऑनलाइन टीचिंग टूल्स, स्मार्ट क्लास, गतिविधि आधारित शिक्षण और छात्र-केंद्रित पद्धतियों का प्रशिक्षण दिया जाए, तो छात्रों की समझ बेहतर होगी और परीक्षा परिणाम सुधरेंगे, जिससे ड्रॉपआउट दर कम होगी। इससे शिक्षा पर किया गया खर्च अधिक प्रभावी सिद्ध होगा और समाज को कुशल, सक्षम और उत्पादक मानव संसाधन प्राप्त होगा, जो दीर्घकाल में आर्थिक विकास में योगदान देगा।

(iv) समावेशी शिक्षा एवं समान अवसर

सामाजिक-आर्थिक रूप से वंचित समूहों की भागीदारी बढ़ाने के लिए लक्षित संपर्क और सहायता योजनाएँ बनाना बहुत जरूरी है, ताकि गरीब, ग्रामीण, पिछड़े और कमजोर वर्ग के छात्र उच्च शिक्षा से जुड़ सकें और अपनी पढ़ाई पूरी कर सकें। उदाहरण के लिए, यदि किसी विश्वविद्यालय में गरीब छात्रों को फीस माफी, शिक्षा ऋण सहायता और अंशकालिक कार्य की सुविधा दी जाए, तो उनकी पढ़ाई जारी रहने की संभावना बढ़ जाती है, जिससे समाज को भविष्य में कुशल मानव संसाधन मिलता है। इसी तरह, छात्र सहायता प्रणाली के अंतर्गत मानसिक स्वास्थ्य परामर्श, वित्तीय सहायता और शैक्षिक मार्गदर्शन की व्यवस्था करना आवश्यक है, ताकि तनाव, आर्थिक दबाव और पढ़ाई की कठिनाइयों के कारण होने वाले ड्रॉपआउट को रोका जा सके; जैसे विश्वविद्यालयों में काउंसलिंग सेंटर, मेंटरशिप प्रोग्राम और छात्र सहायता कोष की स्थापना। साथ ही, समावेशी पहल के तहत परिसर की इमारतों, कक्षाओं और डिजिटल प्लेटफॉर्म को दिव्यांग छात्रों के लिए सुलभ बनाना आर्थिक दृष्टि से भी लाभकारी है, क्योंकि इससे उनकी उत्पादक क्षमता बढ़ती है; उदाहरण के लिए, रैम्प, लिफ्ट, ब्रेल पुस्तकें, ऑडियो सामग्री, स्क्रीन-रीडर सॉफ्टवेयर और ऑनलाइन सुलभ पाठ्य सामग्री उपलब्ध कराकर उन्हें आत्मनिर्भर बनाया जा सकता है, जिससे दीर्घकाल में समाज और अर्थव्यवस्था दोनों को लाभ होता है। (NEP 2020, p.14.1 -14.4.2)

(v) डिजिटल शिक्षा एवं तकनीकी एकीकरण

विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में प्रयोगशालाओं, पुस्तकालयों, छात्रावासों और परिसर की सुविधाओं को इस तरह उन्नत किया जाना चाहिए कि वे पूरी तरह विद्यार्थी-केंद्रित हों और सीखने में सहायक बनें। उदाहरण के लिए, आधुनिक उपकरणों से युक्त विज्ञान प्रयोगशालाएँ, ई-पुस्तकों से सुसज्जित

डिजिटल लाइब्रेरी और सुरक्षित व किफायती छात्रावास विद्यार्थियों की पढ़ाई को आसान बनाते हैं और ड्रॉपआउट दर को कम करते हैं, जिससे शिक्षा पर किया गया खर्च अधिक प्रभावी सिद्ध होता है। इसी प्रकार, डिजिटल रूपांतरण के अंतर्गत एक मजबूत डिजिटल लर्निंग मैनेजमेंट सिस्टम (LMS), SWAYAM और NPTEL जैसे ऑनलाइन पाठ्यक्रम, तथा मिश्रित शिक्षण (ब्लेंडेड लर्निंग) मॉडल को अपनाना चाहिए, ताकि छात्र कक्षा के साथ-साथ घर से भी गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त कर सकें। उदाहरण के रूप में, यदि प्रत्येक कक्षा में स्मार्ट बोर्ड, प्रोजेक्टर, इंटरनेट और टैबलेट की सुविधा उपलब्ध कराई जाए, तो विद्यार्थियों की समझ बेहतर होती है, समय और संसाधनों की बचत होती है तथा दीर्घकाल में यह निवेश समाज के लिए कुशल मानव संसाधन तैयार करने में सहायक सिद्ध होता है। (NEP 2020,p. 23.1- 23.13)

(vi) मातृभाषा / स्थानीय भाषा में शिक्षण

जब छोटे बच्चों को उनकी तो वे विषय को जल्दी समझते हैं, आत्मविश्वास बढ़ता है और स्कूल में रुचि बनी रहती है। उदाहरण के लिए, यदि किसी ग्रामीण क्षेत्र में बच्चों को हिंदी या स्थानीय बोली में गणित और पर्यावरण अध्ययन पढ़ाया जाए, तो वे कठिन विषयों को भी आसानी से सीख पाते हैं और महंगे ट्यूशन या अतिरिक्त सहायता की जरूरत कम हो जाती है, जिससे परिवार का आर्थिक बोझ घटता है। इससे शिक्षा पर किया गया खर्च अधिक प्रभावी सिद्ध होता है और लंबे समय में समाज को बेहतर शिक्षित, कुशल और उत्पादक नागरिक मिलते हैं, जो देश के आर्थिक विकास में योगदान देते हैं।

(vii) मूल्य, नैतिक एवं भारतीय ज्ञान परंपरा

यदि पढ़ाई के साथ-साथ नैतिक शिक्षा, योग, ध्यान और भारतीय ज्ञान प्रणाली जैसे वेद, आयुर्वेद, जीवन कौशल और पर्यावरण संरक्षण की शिक्षा दी जाए, तो छात्रों में अनुशासन, ईमानदारी, आत्मनियंत्रण और सकारात्मक सोच विकसित होती है। उदाहरण के लिए, विद्यालयों में प्रतिदिन योग और ध्यान अभ्यास, नैतिक कहानियाँ और सामाजिक सेवा गतिविधियाँ करवाई जाएँ, तो छात्रों का मानसिक तनाव कम होता है, स्वास्थ्य बेहतर रहता है और पढ़ाई में मन लगता है, जिससे ड्रॉपआउट दर घटती है। इससे शिक्षा पर किया गया खर्च अधिक उपयोगी सिद्ध होता है और समाज को स्वस्थ, जिम्मेदार और कुशल नागरिक मिलते हैं, जो दीर्घकाल में देश की आर्थिक प्रगति में योगदान देते हैं।

(viii) अनुसंधान, नवाचार एवं स्टार्टअप संस्कृति

शैक्षिक संस्थानों में ऐसा वातावरण बनाना ज़रूरी है जहाँ शिक्षक और छात्र मिलकर नए विचारों पर शोध करें, नवाचार करें और स्टार्टअप शुरू कर सकें, क्योंकि इससे शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ती है और आर्थिक विकास को भी गति मिलती है। शिक्षा के अर्थशास्त्र के अनुसार, जब संस्थान शोध और नवाचार में निवेश करते हैं तो यह मानव संसाधन को मजबूत करता है, जिससे छात्रों की रोज़गार क्षमता और उत्पादकता बढ़ती है। उदाहरण के लिए, अगर किसी विश्वविद्यालय में प्रौद्योगिकी आधारित ऊषमायन (Technology based incubation center) केंद्र बनाया जाए, तो छात्र अपने नए विचार जैसे एजुकेशन ऐप, ऑनलाइन लर्निंग प्लेटफॉर्म या सस्ते डिजिटल टूल विकसित कर सकते हैं, जिससे नए रोजगार पैदा होते हैं और संस्थान की आय भी बढ़ती है। इसी तरह, राष्ट्रीय अनुसंधान संस्थान के साथ संस्थागत शोध रणनीतियों को जोड़ने से फंडिंग, संसाधन और मार्गदर्शन मिलता है, जिससे उच्च गुणवत्ता का शोध संभव होता है और देश की ज्ञान-आधारित अर्थव्यवस्था मजबूत होती है। इस प्रकार, शोध, नवाचार और स्टार्टअप संस्कृति शिक्षा को केवल डिग्री तक सीमित न रखकर उसे आर्थिक विकास और सामाजिक प्रगति का साधन बनाती है। (NEP 2020, p. 17.1 – 17.11)

(ix) मूल्यांकन एवं परीक्षा सुधार

रटंत आधारित परीक्षा के बजाय दक्षता आधारित मूल्यांकन अपनाया जाना चाहिए, जिसमें केवल याद करने के बजाय समझ, सोच, समस्या-समाधान और व्यावहारिक कौशल को परखा जाए। उदाहरण के लिए, केवल लिखित परीक्षा के स्थान पर प्रोजेक्ट वर्क, प्रेजेंटेशन, समूह चर्चा, प्रयोगात्मक कार्य

और पोर्टफोलियो मूल्यांकन को शामिल किया जाए, जिससे छात्रों की वास्तविक योग्यता सामने आए। इससे छात्र जीवन की वास्तविक समस्याओं को हल करने में सक्षम बनते हैं, उनकी रोजगार क्षमता बढ़ती है और ड्रॉपआउट दर कम होती है, जो अंततः समाज और अर्थव्यवस्था दोनों के लिए लाभकारी सिद्ध होता है।

(x) सुशासन एवं संस्थागत स्वायत्तता

जब शैक्षणिक संस्थानों को अकादमिक, प्रशासनिक और वित्तीय स्वतंत्रता दी जाती है, तो वे अपनी आवश्यकताओं के अनुसार पाठ्यक्रम बना सकते हैं, योग्य शिक्षकों की नियुक्ति कर सकते हैं और बजट का सही उपयोग कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, यदि किसी विश्वविद्यालय को यह अधिकार हो कि वह स्थानीय रोजगार की जरूरतों के अनुसार नए कोर्स शुरू करे, उद्योगों के साथ साझेदारी करे और अपने संसाधनों से आधुनिक प्रयोगशालाएँ विकसित करे, तो छात्रों को बेहतर शिक्षा और रोजगार के अवसर मिलते हैं। इससे शिक्षा पर किया गया खर्च अधिक प्रभावी सिद्ध होता है, ड्रॉपआउट दर कम होती है और दीर्घकाल में समाज को कुशल मानव संसाधन प्राप्त होता है, जो देश की आर्थिक प्रगति में योगदान देता हैं।

सारांश

संस्थागत नियोजन का अर्थ है कि शैक्षिक विकास और गुणात्मक सुधार के पूर्व निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए व्यक्तिगत संस्थानों द्वारा योजनाएँ शुरू की जाती हैं, तैयार की जाती हैं और लागू की जाती हैं। शिक्षा के अर्थशास्त्र के संदर्भ में संस्थागत योजना एक महत्वपूर्ण रणनीतिक साधन है, जो सीमित संसाधनों के प्रभावी उपयोग द्वारा शैक्षिक गुणवत्ता, दक्षता और परिणामों में सुधार करती है। यह शिक्षा में किए गए निवेश को संस्थागत लक्ष्यों के साथ जोड़ती है, जिससे अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके। साथ ही, लागत, वित्तीय स्रोतों और आर्थिक परिस्थितियों का विश्लेषण कर सूचित निर्णय लेने में सहायता करती है, जिससे शिक्षा की गुणवत्ता और पहुँच में वृद्धि होती है। (सिंह, 2024, p. 27)I

संस्थानगत नियोजन न केवल संस्थान की कार्यक्षमता और गुणवत्ता में वृद्धि करता है, बल्कि यह विद्यार्थियों, शिक्षकों तथा समाज की अपेक्षाओं के अनुरूप शिक्षा व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में भी सहायक होता है। इसके माध्यम से संस्थान अपनी आवश्यकताओं, समस्याओं एवं उपलब्ध संसाधनों का विश्लेषण कर अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन योजनाएँ तैयार कर सकते हैं। इससे प्रशासनिक कार्यों में पारदर्शिता, उत्तरदायित्व तथा समन्वय स्थापित होता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुरूप संस्थागत नियोजन शिक्षा के आधुनिकीकरण, नवाचार, गुणवत्ता संवर्धन तथा वैश्विक प्रतिस्पर्धा के लिए आधार तैयार करता है। अतः प्रत्येक शैक्षिक संस्था के लिए यह आवश्यक है कि वह संस्थागत नियोजन की प्रक्रिया को गंभीरता से अपनाए तथा उसे प्रभावी रूप से क्रियान्वित करे। इससे शिक्षा संस्थाएँ न केवल अपने उद्देश्यों को सफलतापूर्वक प्राप्त कर सकेंगी, बल्कि राष्ट्र निर्माण एवं सामाजिक विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान दे सकेंI

ग्रंथ सूची

- सिंह, के. (2024), शिक्षा का अर्थशास्त्र: एन.ई.पी. 2020 के संदर्भ में, आई. एस. बी. एन.: 978-81-89463-73-1, कलामंदिर, नई सड़क. नई दिल्ली.
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एन.ई.पी.), 2020 । नई दिल्ली: एम. ओ. ई.
- दत्ता, जे. (2024). भारत में संस्थागत योजना। जर्नल ऑफ़ ह्यूमैनिटीज़ एंड सोशल साइंस, 24 (3). 2279-0845.

Cite this Article:

डॉ. करतार सिंह, "संस्थानगत नियोजन: आवश्यकता, आयाम और प्रारुप" Shiksha Samvad International Open Access Peer-Reviewed & Refereed Journal of Multidisciplinary Research, ISSN: 2584-0983 (Online), Volume 03, Issue 04, Pp.415- 424, June-2026. Journal URL: https://shikshasamvad.com/

This is an Open Access Journal / article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution License CC BY-NC-ND 3.0) which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited. All rights reserved.

CERTIFICATE

of Publication

This Certificate is proudly presented to

डॉ. करतार सिंह

For publication of research paper title

संस्थानगत नियोजन: आवश्यकता, आयाम और प्रारुप

Published in 'Shiksha Samvad' Peer-Reviewed and Refereed Research Journal and E-ISSN: 2584-0983(Online), Volume-03, Issue-04, Month June 2026.

Dr. Neeraj Yadav
Editor-In-Chief

Dr. Lohans Kumar Kalyani
Executive-chief- Editor

Note: This E-Certificate is valid with published paper and the paper must be available online at: https://shikshasamvad.com/

DOI:- https://doi.org/10.64880/shikshasamvad.v3i4.44